शब्द–ब्रह्म
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2320 – 0871
17 फरवरी 2014

संजीव की आदिवासी संवेदना

ज्योति कुमारी मीणा
शोध छात्रा (हिन्दी विभाग)
वनस्थली विद्यापीठ
राजस्थान, भारत

शोध संक्षेप

किसी भी रचनाकार की संवेदना उसके समय और इतिहास बोध से बनती है। उसका इतिहास बोध जिस दृष्टि से निर्मित होता है, उसी से वह अपने समय को परखता, जाँचता है और आत्मसात करता है तथा इसी से उसके संवेदन मानस का निर्माण होता है। दरअसल, हर वक्त वह द्वंद्वात्मकता से घिरा होता है। यह द्वंद्वात्मकता समाज के विभिन्न स्तरों पर पसरे-उलझे अंतर्विरोधों से निर्मित होती है और रचनाकार का यही दायित्व होता है कि वह अपने समय-समाज के उन अंतःसूत्रों को समझे जो यथार्थ के जटिल आयामों का निर्माण भी करते हैं और इन्हें समझने के लिए सहायता भी प्रदान करते है। प्रस्तुत शोध पत्र में संजीव की आदिवासी चेतना की पड़ताल की गयी है।

प्रस्तावना

किसी भी रचनाकार की संवेदना उसके समय और इतिहास बोध से बनती है। उसका इतिहास बोध जिस दृष्टि से निर्मित होता है, उसी से वह अपने समय को परखता, जाँचता है और आत्मसात करता है तथा इसी से उसके संवेदन मानस का निर्माण होता है। दरअसल, हर वक्त वह द्वंद्वात्मकता से घिरा होता है। यह द्वंद्वात्मकता समाज के विभिन्न स्तरों पर पसरे-उलझे अंतर्विरोधों से निर्मित होती है और रचनाकार का यही दायित्व होता है कि वह अपने समय-समाज के उन अंतःसूत्रों को समझे जो यथार्थ के जटिल आयामों का निर्माण भी करते हैं और इन्हें समझने के लिए सहायता भी प्रदान करते है। अपने समय के यथार्थ को उसकी सही गति में पकड़ना ही लेखक का उत्तरदायित्व होता है। समाधान तो स्वयं आते जाते हैं।

संजीव का लेखन

'मैं और मेरा समय' में संजीव लिखते है कि "यह काल कांग्रेसी संस्कृति, उपनिवेशवादी, सामंती, संप्रदायवादी, बाजार और उपभोक्तावादी, हठधर्मिता, हुड़दई, लुच्चई और बौद्धिक ऐय्याशी के चैतन्य चूतियापे का भी काल रहा और इनके खिलाफ धीरे-धीरे सिर उठने वाली शक्तियों का काल भी। ...अव्वल तो यह विकास और लोकतंत्र का अर्द्धसत्य है जो भी पार्टी या गठबंधन सत्ता में आ रहे हैं, उनमें और उनके प्रतिपक्ष में फर्क 19 और 20 का ही है।"1 मतलब यह कि मुख्य धारा की राजनीति में शोषित, उत्पीड़ितों के लिए कोई विकल्प नहीं बचा है।

संजीव अपने समय की विभीषिका को पहचानते हैं और इस विभीषिका को बहुत सटीक तरीके से पहचानने का ही नतीजा है कि उनका संवेदन मानस हमेशा उत्पीड़ितों के पक्ष में रहता है। अपने समय के इस संकट को रेखांकित करते हुए उन्होंने लिखा है कि "मेरा समकाल बरोक-टोक

बढ़ती आबादी, यौन हिंसा और अराजकता का काल है। मेरा समकाल उन्मादग्रस्त हुडदंगियों का काल है - क्रिकेट, परमाणु बम, विस्थापन, बंटवारा, बाबरी-मस्जिद ध्वंस, हिन्दू-मुस्लिम, हिन्दू-सिख, हिन्दू-ईसाई ही नहीं, हिन्दू-हिन्दू, मुस्लिम-मुस्लिम, सिक्ख-सिक्ख, जाति-उपजाति के शीत और उष्ण युद्ध (खूनी दंगे का काल), गणेश प्रतिमा को दूध पिलाती पिलपिलाती भीड़ सती के नाम पर नारी हत्या को गरिमामंडित करता, नारी-शिशु, दलित, गरीबों ज्योति-स्फुलिंगों की हत्या का काल रहा है। मेरा काल। विकास मूलक कल्याणकारी योजनाओं, संस्थाओं के बनने और दायित्वहीनता और भोग के विवरों में उनके एक-एक करके विसर्जित होने का काल है यह। फल यह है कि एक ओर बेरोजगारों की अक्षौहिणी सेना सजती जा रही है, दूसरी ओर उसकी, यानी देश की सबसे उर्जावान पीढ़ी की मेधा और तेज को स्वप्नदोष में बदलने के लिए मीडिया के सैकड़ों चैनल्स से उपभोक्तावाद के पुष्पधन्वा विषबुझे तीर चल रहे है। मेरा काल इन अशुभ शक्तियों के खिलाफ संगठित हिंसा का काल है जो बंटवारे से लेकर बेलछी, पिपरा, जहानाबाद, आंध्र से लेकर शंकर गुहा नियोगियों की हत्या से आगे तक आता हैं प्रकटतः तो इसी रक्त पंकिल पथ गुहगिंजन करता तकनालौजी की उपलब्धियों का जादू छिड़कता, सांड-सा डकारता आ रहा हैं मेरा समकाल।"2

संजीव अपने वक्त के अन्तर्विरोधों को पूरी ईमानदारी से पड़ताल करते है और पाते है कि दुश्चक्रों में घिरे उनके वक्त (यह हमारा भी वक्त है) के सामने पहाड़ जैसी कठिन चुनौतियाँ है लेकिन वह साहस भी किसी कोने से पनप रहा है जिसे वह कुत्सितता पसन्द नहीं है वह विरोध करना चाहते है इस असभ्य सभ्यता का। जैसी मिली है उन्हें दुनिया, वैसा नहीं चाहते है वह। ऐसे स्वप्नशील लोगों का भी जिक्र करते है संजीव "पहले की विकृतियाँ साफ भी नहीं हुई कि ग्लोबल विलेज की ये विकृतियाँ घेरने लगी है। अपने नक्सलवादी मित्रों की बाते याद आती हैं। "यह दुनिया ऐसी क्यों है? कब तक बर्दाश्त करते रहेंगे हम ऐसी दुनिया को?"3 इस तरह के सवाल हमारे समय को सही और झूठ को सीधे मुंह पर कह देने का माद्दा भी देते हैं।

बकौल संजीव "मेरा समय इस माने में महत्वपूर्ण है कि ...सदियों से चले आ रहे झूठ को दो टूक से धता कर देने का साहस रखता है।"4 यही साहस है जो हमारे समय को महान बनाता है वे आगे लिखते है कि "मेरा समय महान है कि इसने अधिकार-वंचितों को शिक्षित-प्रशिक्षण का अधिकार सचेतन करना शुरू कर दिया है बल्कि इस मायने में तो और भी ईमानदार कि पहली बार दुर्मत परतदार ताकतों से निकलकर एक विशाल साहसी वर्ग इस झूठ के खिलाफ खड़ा भी हो रहा है और उन पर पड़ने वाली लाठियों, गोलियों की पीठ पर झेल भी रहा है।"5 एक ऐसे हीअंतर्विरोधों से भरे समय के सशक्त कथाकार है संजीव। इन अंतर्विरोधों को परखने की और समझने की उनकी क्षमता और स्तर ही उनकी संवेदना का निर्माण करती है।

संजीव की संवेदना का धरातल दुश्चक्रों और दुश्चक्रों को भेदने का साहस रखने वाली वैचारिकता के द्वंद से हुआ है। लूट, दमन, भ्रष्टाचार और कुत्सित नरसंहारों के इस दौर में रचना को इनके विरूद्ध खड़ा करने की ताकत है।

संजीव की कथा संवेदना में। मजबूत वैचारिक धरातल पर निर्मित यह चेतना/संवेदना और पीड़ितों-वंचितों के पक्ष में खड़े होने का इतिहासक बोध ही उन्हें जाति-दमन, भ्रष्टाचार, विस्थापन, महिलाओं के यौन शौषण, आन्दोलनों के चरित्र और उनके विरूद्ध चर रही साजिशों आदि पर लिखने के लिए प्रेरित करता है। आदिवासियों के प्रति संजीव की संवेदना का निर्माण भी इन्हीं अंतविरोधों से होता हैं उनकी रचनाओं का एक बड़ा हिस्सा आदिवासियों पर केन्द्रित है। उनके इतिहास, उनकी संस्कृति और सामाजिक-सरंचना का शोधात्मक और संवेदनात्मक ज्ञान है संजीव के पास। कुल्टी में काम करते हुए उन्होंने आदिवासियों को, उनकी जीवन स्थितियों की विस्थापन के कारण उपजे अन्तहीन शोक और तिस पर हो रहे शोषण के दुश्चक्र को नजदीक से देखा-समझा। इसे नजदीक से समझने का एक अतिरिक्त कारण भी स्वीकार करते हैं। "मेरा मानना है कि जिस कथा का ढांचा खड़ा करना है, लेखक को उसकी पूरी बनावट की जानकारी होनी चाहिए। छोटे-छोटे ब्यौरे तक।"6 शायद इसका कारण उनकी विज्ञान की पृष्ठभूमि हो। वे आदिवासियों को दया-भाव से नहीं देखते बल्कि एक संघर्ष चेता लेखक की हैसियत से देखते हैं जो उनकी स्थिति से सहानुभूति तो रखते है। साथ ही उन स्थितियों, जीवन और जीवन के स्थूल प्रसंगों से लेकर उनके मन और आत्मा को अपने मन में उतार लेने की प्राणपण से कोशिश भी करते है और उनसे लड़ने के रास्ते भी निकालने की कोशिश करते है। उनके ब्यौरे जानने की आदत ने उन्हें आदिवासी समाजों और उनकी समस्याओं से गहरे तक परिचित करा दिया है। इसलिए संजीव अपनी रचनाओं में आदिवासियों की समस्या, उनके संघर्ष और संघर्ष की चुनौतियों पर प्रभावी ढंग से लिख सके है। उन्होंने आदिवासियों की समस्याओं और संघर्षों को नजदीक से समझकर उनके समक्ष खड़ी चुनौतियों के उलझे सूत्रों की तलाश करने की कोशिश की है। वंचितों के प्रति अपनी प्रतिबद्ध पक्षधरता के चलते वे उन तत्वों की शिनाख्त करते है जो आदिवासी-समुदायों के विनाश और विस्थापन के लिए जिम्मेदार है। वर्णवादी, जातिवादी और सामंती व्यवस्था के समर्थकों और पूंजीवादी व्यवस्था के दलालों उनकी सांठगांठ का वे अपनी रचनाओं में पर्दाफाश करते हैं। साथ ही साथ आदिवासियों को उनके उन्नत इतिहास और समता-मूलक व्यवस्था की पहचान भी कराते हैं। दरअसल संजीव की आदिवासी संवेदना उनकी उसी वृहद-चेतना का हिस्सा है जिसमें वे यह मानते है कि यह दुनिया यह सभ्यता जैसी है। इसे वैसी नहीं होना चाहिए। वंचितों के अधिकारों के पक्ष में क्रूर शासन व्यवस्था के खिलाफ क्रान्ति चेतना से ही निर्मित हुई है उनकी आदिवासी संवेदना। इस संवेदना को हम उनकी रचनाओं के माध्यम से बेहतर तरीके से समझ सकेंगे। उनकी एक प्रसिद्ध कहानी है - 'दुनिया की सबसे हसीन औरत।' एक सब्जी बेचने वाली उरांव आदिवासी युवती ट्रेन में बैठी है। मूलियाँ लेकर, टी.टी. साहिबा टिकट मांगती है, उसके दिखाने पर कहती है। "औsss बड़ा पैसा हो गया है देखते हैं अब तुम भी टिकट कटा कर चलने लगे हो।"7 मूलियों का दस रूपये और मांगती है। तभी रेल्वे के जवान आते हैं, डिब्बे में। मुठ्ठी भर मूलियाँ बिना पूछे ही चुन लेते हैं। गाड़ी में कुछ मास्टरिनें और चटर-पटर अंग्रेजी बोलने वाली लड़कियाँ बैठी है। बिना टिकट। टी.टी. साहिबा

उनसे पांच-पांच रुपया लेती है, कहती है - "और कोई होता तो दस से कम क्या लेते, जाइए, आप लोग तो वैसे भी हमारे लिए रेस्पेक्टफुल है। वो क्या है, हाँ भारत भाग्य विधाता।"8 फिर से उनका ध्यान उस आदिवासी युवती पर जाता है और वे फिर मांग बैठती है 'दस रुपये'। उसके दया मांगने पर कहती है "ऐसी दया करते फिरे तो हम खाएँगे क्या आँsss!! सब हंस पड़ते है। बेशर्म हंसी। तभी एक मूली गिर पड़ती है। एक मास्टरनी के ऊपर। चीख पड़ती है वह। आदिवासी युवती के यह पूछने पर कि 'का हुआ बहिनी'? उनका जवाब है बहिनी-बहिनी मत बोलो जंगली कहीं की। हम तेरी तरह बाजारू नहीं है।' आदिवासी युवती रूआंसी हो जाती है। कथानायक दुत्कारता है उन सारे लोगों को। बताते है कि समाने बैठी आदिवासी युवती जिसके चेहरे पर तीन गोदने है, उसका क्या मतलब है? उरांव रानी सिनगीदई ने तीन बार हराया था। मुगलों की सेना को। चौथी बार गद्दारी के चलते हुई पराजय का बदला मुगलों ने महिलाओं के चेहरे तीन बार दागकर लिए। ये तीन गोदने निशानी है। उरांव महिलाओं की बहादुरी के - मुगलों की पराजय के। "जुल्म की मुखालफ़त की बहादुरी है और जरूरी नहीं कि बहादुरी महज जीत का ही बाइस बने, उसकी हार भी सिंगार हो।"9 सहम गये वे सब लोग जिनकी सभ्यता में सिर्फ पाखण्ड और दलाली सिखाई जाती है जिन्होंने चाटुकारिता और चारण गायन के ऐतिहासिक कीर्तिमान स्थापित किए है और उधर बहादुरों की वंशज वह आदिवासी उरावं युवती। कथानायक कहते है - "उसने मुझे जिस नज़र से देखा, ओह! वह नज़र थी या कुदरत का बेमिसाल तोहफा, जैसे - वे आँखे कभी-कभी पैदा हुई थी। पलकें अभी आँसू तोल रही थी। मगर गर्दन खिली हुई, कोये सिन्दूरी, जैसे- घने कोहरे और अंधेरे को चीरते हुए सूरज की ताजा किरण फूटी आ रही हो।"10 अलोचक डॉ. रविशंकर सिंह इस कहानी पर टिप्पणी करते हैं। "संजीव के लिए प्रतिरोध और संघर्ष करने वाली औरत ही दुनिया की सबसे हसीन औरत है।" ....प्रगतिशील लेखक संघ' के मंच से प्रेमचन्द ने कहा था "हमें सुन्दरता की कसौटी बदलनी होगी।" और संजीव ने वह कसौटी बदल दी है।"11 कथानायक ट्रेन में बैठी उस उरांव युवती के लिए 'दया-भाव' दिखाने की बजाय उसकी वीरता और संघर्ष-चेतना की याद दिलाता है। यही संजीव की आदिवासी संवेदना की मजबूती है। आदिवासियों के सामने इस समय उनके इतिहास का अब तक का सबसे बड़ा संकट आया है। यूं तो उन्हें खदेड़ कर विस्थापित होने के लिए मजबूर किया जा रहा था, लेकिन आज व्यवस्था उन्हें केवल विस्थापित नहीं कर रही है बल्कि उनके अस्तित्व को ही मिटा देने पर आमादा है। उनके विरूद्ध शोषकों का समूह व्यवस्थित तरीके से विकसित हो गया है। एक ऐसे तंत्र के रूप में जहाँ आदिवासियों के चारों तरफ उनका खून चूस लेने वाले ठेकेदार पुलिस-प्रशासन सरकार, नेता ढ़िकू सब एक साथ है। इतने तरह के वर्ग शत्रु एक साथ। संजीव की 'टीस' कहानी में शिबू काका जमीन माफिया द्वारा अपनी जमीन कब्जा कर लिए जाने पर सपेरा बन कर जीवन यापन करने के लिए मजबूर हो जाता है। इन वर्ग शत्रुओं की पहचान सांपों के रूप में करते है। .."रोड़ पर जा रहा है एक नम्बर का अजगर मुखिया पिनाकी महतो। जितना सरकारी पैसा और समान गाँव के लिए मिलता है। सब साला के पेट में जाता है।"12

इस कहानी में संजीव लिखते है - ".....समाज में दो ही वर्गीकरण थे शिबू काका के अनुसार एक सांप, चैकन्ने, लिजलिजे, जहरीले और दूसरे मेंढक या मछलियाँ आनन्द में भूले सीधे और सपाट कभी भी दूसरे का आहार बन जाने की नियति से बंधे।13

संजीव की आदिवासी संवेदना इन्हीं आनन्द में भूले, सीधे और सपाट लेकिन दूसरे का आहार बन जाने की नियति से बंधे लोगों के पक्ष में खड़ी है। उनके दुःख में भी उनके संघर्ष में भी। शिबू काका के बहाने संजीव उन वर्ग शत्रुओं के समुच्चय की पहचान करते है जो इतिहास की सबसे बड़ी लूट और नरसंहार में हिस्सेदार है।

संजीव की संवेदना आदिवासियों के हितों के लिए ईमानदारी से लड़ने वालों के साथ खड़ी है। 'गुफा या आदमी' कहानी में तैयब चा आदिवासियों और गैर-आदिवासियों में फर्क बताते हुए कहते है "वे इस माने में असभ्य जरूर है कि उन्हें छुपाना नहीं आता और हमें आता है। पाप करके जो जितने बेहतरीन ढंग से छुपा ले जाय। खून करने के बाद वे खुद थाने में हाजिर हो जाते हैं, मैंने खून किया है, मुझे सजा दो। हमारे बड़े से बड़े नेता और शरीफजादे भी आखिर तक इंकार करते रहते है और ले देकर जुडिशियरी, ब्यूरीक्रेसी, जांच-कमीशन के फंदे से सही साबुत निकल आते है। बेशक वे ऐसे सभ्य नहीं हुए अभी।"14

यहाँ पर संजीव की आदिवासियों के प्रति गहरी संवेदना अभिव्यक्त हुई है। आदिवासियों की अस्मिता की पहचान को स्वीकार करते है। संजीव की कथा चेतना में शोषक संस्कृति के प्रति तीव्र विकर्षण और घृणा है। 'जंगल जहाँ शुरू होता है' में थारू जनजाति के लोग पुलिस से भी उतना ही डरते है जितना डाकुओं से डरते हैं। फर्जी एनकाउंटरों में मारे जाते हैं बेकसूर आदिवासी। उपन्यास के एक पात्र इब्राहिम चाचा कहते है। "आज जेल में ही एनकाउन्टर कर डाला, मार डाला बिसराम भाई को।"15

निष्कर्ष

प्रशासन की यह क्रूरता मानवता और आदमी के विरूद्ध षडयंत्र रच रही है और संजीव इस षडयंत्र से लड़ने के लिए आदिवासी समाज में 'मैना', 'मांझी हड़ाम' जैसे पात्रों को तैयार करते हैं। अतः यहीं संजीव की आदिवासी संवेदना का संक्षिप्त विवरण है।

सन्दर्भ –

1 संजीव - संजीव की कथा यात्रा, तीसरा पड़ाव, पृ. 11
2 संजीव - संजीव की कथा यात्रा, तीसरा पड़ाव, पृ. 11
3 संजीव - संजीव की कथा यात्रा, तीसरा पड़ाव, पृ. 16
4 संजीव - संजीव की कथा यात्रा, तीसरा पड़ाव, पृ. 12
5 संजीव - संजीव की कथा यात्रा, तीसरा पड़ाव, पृ. 13
6 संजीव - संजीव की कथा यात्रा, दूसरा पड़ाव, पृ. 9
7 संजीव - संजीव की कथा यात्रा, दूसरा पड़ाव, पृ. 38 8
संजीव - संजीव की कथा यात्रा, दूसरा पड़ाव, पृ. 39 9
संजीव - संजीव की कथा यात्रा, दूसरा पड़ाव, पृ. 41 10
संजीव - संजीव की कथा यात्रा, दूसरा पड़ाव, पृ. 42 11
पाखी - सितम्बर 2009, पृ. 146
12 संजीव - संजीव की कथा यात्रा, पहला पड़ाव, पृ. 64
13 संजीव - संजीव की कथा यात्रा, दूसरा पड़ाव, पृ. 64
14 संजीव - संजीव की कथा यात्रा, तीसरा पड़ाव, पृ.338
15 संजीव - जंगल जहां शुरू होता है, पृ. 192